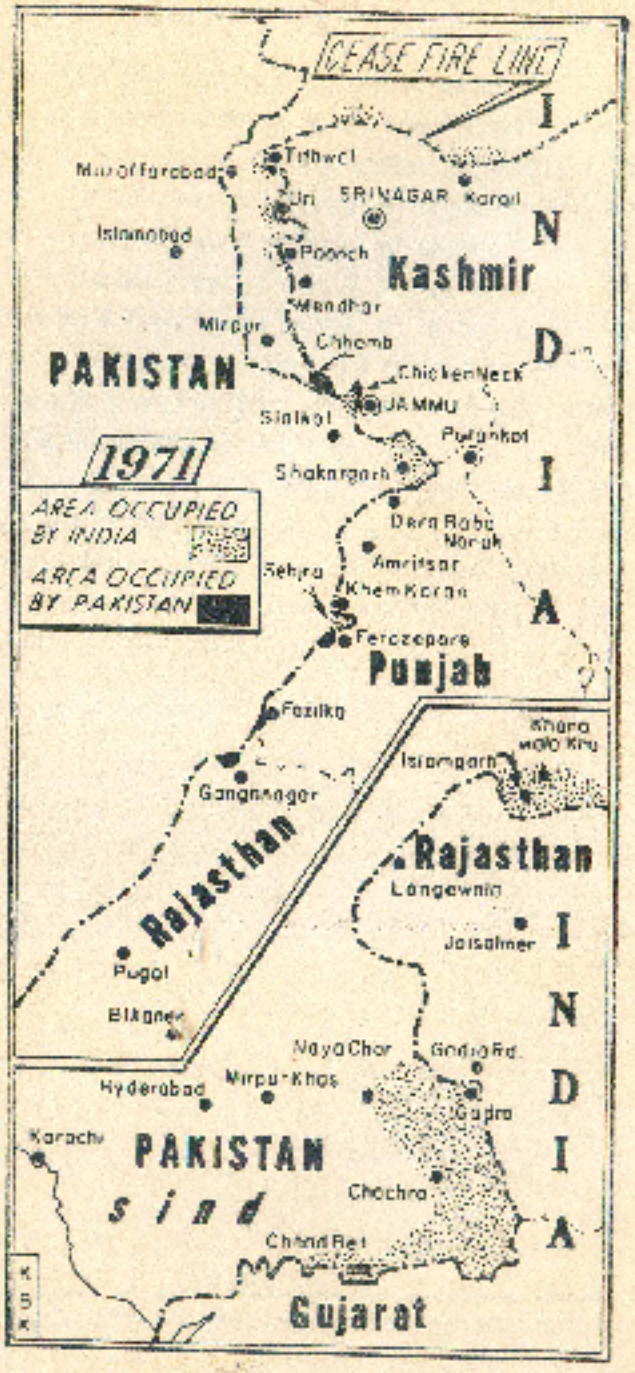

शिमला

में

समर्पण

भारतीय जनसंघ प्रकाशन

शिमला में समर्पण

शिमला में वही हुआ जिसका डर था। विजय पर पानी फेर डाला गया। वह धरती, जिसे जीतने के लिए शहीदों ने अपनी प्राणप्रियाओं की मांग से लाली छीन ली और मल दी अपनी मसों की राख; वह धरती, जिसे जीतकर बलिदानी भारतीय सपूतों ने कोख और दूध की लाज तो रखी पर बुढ़ापे की लाठी छीनकर; वह धरती, जिस पर फतह हासिल करने के लिए भाइयों ने बहनों की राखी के तार तोड़ दिए और दे दी आंखों से गिरने वाली बूंदों की न थमनेवाली लड़ी; वह अनमोल धरती हमने पाकिस्तान को बेमोल दे दी। वह भूमि जिसे गरम खून और जवान जिस्म के लोथड़ों से पाटकर जीती थी, हमने गंवा दी शांति के थोथे खोखले वादों पर। पिछले पच्चीस वर्षों के चार हमले और चार हजार छेड़खानियां हमें अब तक समझा पाईं कि स्थायी शांति का पाकिस्तानी वादा वेश्याओं के सतीत्व के वादे जैसा और शराबियों की शराब से तोबा जैसा वादा है। किन्तु ऐसे वादे पर श्रीमती गांधी ने वार्ता की टेबल पर वह सब गंवा दिया, जिसे भारतीय सेना ने अपने चमत्कारिक शौर्य और पवित्र बलिदान से भारत मां के चरणों में अर्पित किया था। शिमला में समझौता नहीं हुआ। शिमला में समर्पण हुआ। विश्वासघात हुआ—और विश्वासघात। जय को पराजय में बदलने वाला विश्वासघात। वह विश्वासघात, जिसे कोई भी गैरतमंद कौम कभी माफ नहीं कर सकती। यही कारण है कि इस विश्वासघात, जिसके खिलाफ देश के कोने-कोने से इसे रद्द करने की आवाज बुलन्द हो रही है। भुट्टो ने काश्मीर में पाकिस्तानियों द्वारा खून बहाने का ऐलान कर के इस समझौते को मौत के घाट उतार दिया है। भारत सरकार उसकी सड़ी लाश से चिपकी बैठी है। भारत की स्वाभिमानी जनता को इस सड़ी लाश को दफनाना होगा। तो आइए इस समझौते की समीक्षा करें।

शिमला समझौते के दो ठोस परिणाम

शिमला के शिखर सम्मेलन में २ जुलाई को भारत-पाक समझौते पर भारत की प्रधानमन्त्री श्रीमती गांधी तथा पाकिस्तान के राष्ट्रपति श्री जुल्फिकार अली भुट्टो ने हस्ताक्षर किये। सन्धियों में काम आने वाली निरर्थक तथा औपचारिक लफ्फाजी को छोड़ दिया जाय तो इसके दो ठोस परिणाम होंगे :

(१) भारत ५१३९.१० वर्गमील उस भूमि पर से अपने सैनिक हटायेगा, जिस पर दिसम्बर युद्ध के दौरान भारतीय सैनिकों ने कब्जा किया था और

पाकिस्तान उसी दौरान कब्जा किए गए ६९.२० वर्गमील भारतीय भूमि पर से अपने सैनिक हटायेगा। ऐसा शिमला समझौते की धारा ४ 'क' के अनुसार होगा।

(२) दूसरा ठोस परिणाम समझौते की धारा ६ में है। इसके अनुसार दोनों देशों के प्रधान भविष्य में मिलेंगे और 'जम्मू काश्मीर विवाद के अंतिम निपटारे' के प्रश्नों पर विचार करेंगे। इस तरह काश्मीर का प्रश्न भारत ने विवाद्य मान लिया, जो अब तक नहीं मानता था।

ये दोनों ठोस परिणाम पाकिस्तान के पक्ष में गए।

पाकिस्तान के राष्ट्रपति ३ लक्ष्यों को लेकर शिमला आये थे :

(१) खोयी हुई धरती वापस लेने

(२) युद्धबन्दी मुक्त कराने

(३) काश्मीर प्रश्न पर पाकिस्तानी हितों को मजबूत करने

भुट्टो की राजनयिक सफलता

प्रथम और तृतीय लक्ष्य की प्राप्ति में उन्हें पूर्णतया सफलता मिली। जहां तक दूसरे लक्ष्य का प्रश्न है भुट्टो का यह कहना सही है कि भारत को उन्हें छोड़ना ही होगा। यह भी ठीक है कि कोई देश चाहे तो जीती हुई जमीन पर कब्जा बनाये रख सकता है, जैसा इजराइल ने कर रखा है, पर ९३००० युद्धबन्दियों को कैद में रखे रहना उतना सरल नहीं है। व्यय-साध्य होने के अलावा संसार के विभिन्न देशों के दबाव जिनेवा समझौते की नैतिकता का वास्ता लेकर हमारा गला पकड़ेंगे। "बंगला देश के संयुक्त कमान के सामने समर्पण करने के कारण यह मसला द्विपक्षीय न होकर त्रिपक्षीय है" का हमारा तर्क बंगला देश को पाकिस्तान द्वारा मान्यता देने तथा पाक बंगला सम्बन्धों के सामान्यीकरण के बाद हमारे हाथ से वह तर्क भी जाता रहेगा। युद्धबंदियों के सवाल पर भुट्टो का आशावाद निराधार नहीं है। अन्तर्राष्ट्रीय वातावरण और मानवीय तर्कों के समक्ष जिनेवा समझौते के मुताबिक हमें इन युद्धबंदियों को लौटाना ही पड़ेगा।

अर्थात शिमला सम्मेलन में भी भुट्टो और पाकिस्तान के तीन लक्ष्यों में दूसरे की जितनी थोड़ी सी पूंछ अटकी रह गई है, उसका निकलना भी निश्चित है। पाकिस्तान पहुंचते ही लाहौर के हवाई अड्डे पर प्रतीक्षारत पाकिस्तानियों को भी भुट्टो ने कहा था कि "पाकिस्तान की खोई हुई जमीन तथा युद्धबन्दियों को लेने के लिए मैं शिमला गया था। जमीन लेकर लौटा हूं। हमारे कैदी भाई भी शीघ्र ही छूट जायेंगे। मैंने पाकिस्तान के किसी सिद्धांत के साथ समझौता नहीं किया। मैंने युद्धवर्जन सन्धि को भी स्वीकार नहीं

किया है" "क्या आप खुश हैं ?" तब ""हां हम खुश हैं" का गगनभेदी जनघोष हुआ था।

श्रीमती गांधी संकुल समझौते का वादा पूरा न कर सकीं

भारत का लक्ष्य भारत और पाकिस्तान के बीच टिकाऊ शांति के लिए समस्त उलझे मामलों पर एक संकुल समझौता प्राप्त करना था। इस तथ्य की घोषणा अन्यों के अलावा स्वयं प्रधानमन्त्री श्रीमती इन्दिरा गांधी ने एकाधिक बार की थी।

क्या संकुल समझौता हुआ ? नहीं। बल्कि भारत ने टुकड़े-टुकड़े में समस्याओं को देखने का पाकिस्तानी नजरिया कबूल किया। यह भुट्टो साहब की कूटनीतिक विजय और हमारी कूटनीतिक पराजय का प्रमाण है।

भारत सरकार ने आज संकुल समझौते की चर्चा तक बन्द कर दी है। जैसे इस तरह की कोई बात कभी थी ही नहीं। यह चुप्पी पराजय की चुप्पी है। लेकिन फिर भी इस समझौते की शुभ सफलताओं का ढोल पीटा जा रहा है।

समझौते के उन शुभ संकल्पों में मुख्यतः निम्न बातें गिनाई जाती हैं :

(क) दोनों देश विवादों को शान्तिपूर्ण ढंग से सुलझायेंगे।

(ख) भारत ने दोनों देशों के मतभेदों को द्विपक्षीय बातचीत से हल करने का अपना सिद्धांत पाकिस्तान से मनवा लिया है।

(ग) टकराव समाप्त करके शान्ति के युग का सूत्रपात किया है।

झूठी शान्ति और पाकिस्तान का इरादा

यह सच है कि 'दोनों देश विवादों को शान्तिपूर्ण ढंग से सुलझायेंगे' का वचन सन्धि में है। समझौते की धारा ४ 'ख' में जम्मू-काश्मीर में १७ दिसम्बर की युद्धविराम रेखा का सम्मान करेंगे भी कहा गया है।

पर १४ जुलाई को पाकिस्तान की राष्ट्रीय असेम्बली में राष्ट्रपति भुट्टो के बयान ने समझौते की तमाम शुभेच्छाओं को मौत के घाट उतार दिया है।

उन्होंने कहा है कि 'काश्मीर को भारत के शिकंजे से मुक्त होने का एक ही रास्ता है कि काश्मीरी अपना स्वातन्त्र्य-संग्राम आरम्भ करें। जैसे ही शेख अब्दुल्ला या मौलवी फारूक काश्मीर की मुक्ति का संग्राम प्रारम्भ करेंगे, पाकिस्तानी सहायता के लिए कूद पड़ेंगे। पाकिस्तानी काश्मीर के लिये अपना खून बहाने में तनिक नहीं हिचकेंगे चाहे इसका नतीजा फिर युद्ध ही क्यों न हो ?'

भुट्टो के इन कथनों से शिमला समझौता मौत के घाट उतार दिया गया

है। समझौते की सारी भावना जिसे लेकर भारत में उसके समर्थक दुमी पीटते घूम रहे थे, का गला घोंट दिया गया है। ताशकन्द भावना की मौत इतनी जल्दी नहीं हुई थी।

वास्तविकता यह है कि शान्तिपूर्ण उपायों और शान्ति की शुरूआत अंतर्राष्ट्रीय सन्धियों की शब्दावली में अर्थहीन शब्दाडम्बर मात्र ही होते हैं। उसका लक्ष्य सिर्फ सन्धि के मूल वक्तव्यों को सजाना और ढकना भर रहता है। शान्ति की ऐसी बहुत-सी बातें हमने भारत-पाक युद्धों के बाद, युद्ध-विरामों, समझौतों आदि के वक्त बार-बार सुनी है। मगर हर बार शान्ति की शुरूआत भर हो के रह जाती है और उसका अन्त होता है नयी लड़ाई में। इस पुस्तिका में इसका विस्तृत व सिलसिलेवार ब्योरा अन्यत्र प्रकाशित किया जा रहा है। शान्ति की सदिच्छाएं तो ठीक हैं पर शान्ति प्राप्त करने का यह ढंग गलत है।

द्विपक्षीय वार्ता निरर्थक तुल

जहां तक द्विपक्षीय वार्ता से मामलों को हल करने की बात है इसमें कोई दम नहीं। यह भी बिल्कुल खोखली है।

● स्वयं समझौते की धारा ४ 'ख' में जहां द्विपक्षीय वार्ता का जिक्र है वहां "अथवा ऐसे किसी उपाय से हल करेंगे जो दोनों देशों को मान्य हो" कहा गया है। अर्थात दोनों देश अगर किसी तीसरे देश को मध्यस्थ बना लें तो हस्तक्षेप का मार्ग खुला रहेगा।

● फिर आज के राजनयिक वार्तालापों में तीसरे पक्षों का भौतिक रूप में उपस्थित रहना या न रहना उसके प्रभाव के होने या न होने की गारंटी नहीं। भौतिक रूप से अनुपस्थित रह कर भी तीसरी शक्ति हस्तक्षेप कर सकती है। यह नहीं भूलना चाहिए कि आज दुनिया के मुख्य सत्ता केन्द्र 'हाट लाइनों' से जुड़े हुए हैं।

● फिर द्विपक्षीय वार्ता की बात तो स्वयं भुट्टो का अपना मनचाहा तरीका है। यह उन्होंने पाकिस्तान की राष्ट्रीय असेम्बली में घोषणा की है। इसमें हमारे द्वारा पाकिस्तान से मनवाने की बात कहां है?

● तीसरे पक्ष का हस्तक्षेप गौरवास्पद बात नहीं है। पर कदाचित इसके लिए हमारे विरोध का कारण विश्व में हमारा मित्रहीन होना और संयुक्त राष्ट्र संघ में हमारा पाकिस्तान के मुकाबले में कम समर्थन प्राप्त करने की क्षमता होना है।

● तीसरे पक्ष के हस्तक्षेप की बात इसलिए भी बेमानी है कि संयुक्त राष्ट्र संघ से कश्मीर का मामला वापस न लेने की घोषणा इस समझौते के

बाद भी पाकिस्तान सरकार के अनेक प्रवक्ताओं द्वारा की जा चुकी है।

● कूटनीतिक सम्बन्धों के अन्तर्गत नए आयामों पर संसार की बड़ी शक्तियों के सक्रिय होने की मौजूदा स्थिति में यह द्विपक्षीय वार्ता की बात कोई विशेष महत्व नहीं रखती।

● फिर पाकिस्तान सीटो-सेन्टो और चीन से सन्धिबद्ध राष्ट्र है। ये संधियां भारत-रूस संधि से जुदा प्रकार की हैं और तीसरे पक्ष के हस्तक्षेप व प्रभाव के बिना द्विपक्षीय वार्ता के इस गगनचुंबी सफलता को बेतुकी ठहराती हैं।

इसका स्पष्ट अर्थ है कि भारत ने इस समझौते में खोया ही खोया है पाया कुछ नहीं। जिन बातों को लेकर इसकी सफलता का ढिंढोरा पीटा जा रहा है वे निहायत खोखली हैं।

हम स्वर्णावसर चूक गये

शिमला में भारत के पास एक स्वर्ण अवसर था। उसके हाथ में तमाम अच्छे पत्ते थे। अगर वह उनका उपयोग करता तो पाकिस्तान को सकुल समझौते के लिये बाध्य कर सकता था। शिमला में भारत को निम्न मसले हल करने की कोशिश करनी चाहिए थी :

(१) पाक अधिकृत एक तिहाई कश्मीर पर से पाकिस्तानी कब्जा हटाना।
(२) भारत-पाक युद्ध का हरजाना लेना।
(३) १९६५ के ताशकन्द समझौते के मुताबिक जब्त माल को वापस न करने की प्रतिभूति कराना।
(४) इण्डियन एयर लाईन्स के विमान के अपहरण की क्षतिपूर्ति लेना।
(५) विभाजन के समय का कर्जा वसूल करना।
(६) पाकिस्तान में मन्दिरों और गुरुद्वारों की सुरक्षा तथा देखभाल।
(७) पाकिस्तान में भारतवंशी अल्पसंख्यकों की सुरक्षा।
(८) भारत विरोधी प्रचार पर रोक तथा भारत के आंतरिक मामलों में हस्तक्षेप न करने का वादा।
(९) भारत विरोधियों की मदद करने से बाज आने का वादा।

इन प्रश्नों के साथ पाक की भारत अधिकृत जमीन तथा पाक युद्धबंदियों को लौटाने का सवाल जोड़कर स्थायी शांति के लिए एक संकुल समझौता प्रयास किया जाना चाहिए था।

शान्ति—मोम की गुड़िया—पहली ही आंच में पिघल जायेगी

पर इस बेहतर स्थिति के बावजूद युद्ध भूमि में जीती हुई भूमि वापिस

कर हमारे शासक खाली हाथ शिमला से लौट आए। और भुट्टो विजयी मुद्रा में अपना कद और ऊंचा उठाकर स्वदेश लौटे।

और इधर भारत के विदेश मंत्री सरदार स्वर्णसिंह शिमला से दिल्ली विदेश मंत्रालय की संसदीय सलाहकार समिति में सफाई देने के लिए तशरीफ लाये। वे कूटनीति की टेबल से सैनिकों की शहादत पर पानी फेर कर 'स्थायी शांति' का तोहफा लेकर आए थे।

देश को याद है यही सरदार स्वर्णसिंह ताशकन्द से भी 'स्थायी शांति' लेकर आये थे। जाने कितनी बार हम शांति की इस मृगमरीचिका के चक्कर में कूटनीतिक युद्ध हारते और सैनिकों के बलिदान का उपहास करते रहे हैं। आज पाकिस्तान बिना युद्ध वर्जन संधि किए वांछित पा लेने पर गद्गद् है और हम इस 'मोम की गुड़िया—शांति' को देख देखकर प्रसन्न हैं जो पहली ही आंच में हमेशा की तरह पिघल जायेगी।

पाक असेम्बली में पुष्टि का अर्थ

भुट्टो इस खोती हुई बाजी को अपने हाथ से नहीं निकलने देना चाहते थे। वे हिन्दुस्तानी जनता के जागने के पहले ही समझौते को लागू करवा देना चाहते हैं। इसीलिए भुट्टो साहब ने १५ जुलाई को पाकिस्तान की असेम्बली से चटापट समझौता पुष्ट करा लिया है।

कोई यह न समझे कि पाकिस्तान की राष्ट्रीय असेम्बली ने शांति की तमन्ना से इस समझौते को पारित किया है। पाकिस्तान की असेम्बली में इस समझौते को एक व्यापक समर्थन मिला प्रतीत होता है। पर यदि वहां के विभिन्न दलों के नेताओं के तथा भुट्टो समर्थकों के भाषणों को विस्तार से देखा जाय तो यह समर्थन तीन तत्वों को मिला प्रतीत होता है:

(१) जमीन मुक्त कराने को

(२) भुट्टो के नेतृत्व को

(३) युद्धबंदी छुड़ाने के आधार के रूप में इस समझौते को।

शांति और युद्धवर्जन को समर्थन नहीं मिला। बल्कि भुट्टो सहित अनेक प्रमुख नेता काश्मीर के सवाल पर खून बहाने की भाषा में ही सोचते हैं।

काश्मीर के लिए खून बहाने के तराने

श्री भुट्टो साहब ने काश्मीर के बारे में पाकिस्तान की राष्ट्रीय असेम्बली में गर्वपूर्वक कहा कि 'ताशकन्द समझौते के बाद पहली बार काश्मीर का सवाल फिर से जिन्दा हुआ है।' उन्होंने कहा कि 'अगर वार्ता असफल होती है तो काश्मीर के सवाल को फिर से संयुक्त राष्ट्रसंघ में छेड़ने से हमें रोकने वाला

कौन है? हमारा देश उस सवाल को संयुक्त राष्ट्र संघ से वापस लेना नहीं चाहता। हम काश्मीरियों के आत्मनिर्णय के सवाल के समर्थक हैं और उसके लिये खून बहाने में भी संकोच नहीं करेंगे।'

अर्थ यह है कि काश्मीर सवाल पर पाकिस्तान जहां का तहां खड़ा है और हमने 'जम्मू-काश्मीर के अन्तिम निपटारे' को स्वीकार कर दो कदम पीछे ले लिया है।

जिस समस्या को निमित्त बनाकर पाकिस्तान ने १९४८ से लेकर अब तक भारत को शांति के साथ जीने नहीं दिया है और बार-बार उसे युद्ध के मुंह में धकेला है, वह काश्मीर प्रश्न अभी भी खुला रह गया है। भुट्टो साहब अभी भी 'आत्मनिर्णय' तथा 'जनमत संग्रह' का राग अलाप रहे हैं। दिसम्बर युद्ध के पश्चात् भारत सरकार ने यह दावा किया था कि इस बार कश्मीर समस्या का अन्तिम निपटारा करके ही पाकिस्तान से कोई समझौता किया जायेगा, जबकि भुट्टो साहब शुरू में कश्मीर समस्या को टालने की कोशिश में लगे रहे। अन्त में वही हुआ जो वे चाहते थे। भारत सरकार ने कश्मीर के प्रश्न को हल किए बिना ही पाकिस्तान को वह सब लौटा दिया, जिसके आधार पर पाकिस्तान को कश्मीर के प्रश्न पर झुकने के लिए विवश किया जा सकता था।

पाक की सामरिक तैयारियों का नजरिया

पाकिस्तान जानता है कि काश्मीर समस्या ऐसे नहीं सुलझेगी। पाकिस्तान की सामरिक तैयारी का उद्देश्य भी यही है। एशिया की सबसे बेहतर सेना बनाना, सेना की डिविजनें बढ़ाना, हथियारों, टैंकों, लड़ाकू विमानों से लैस होना सब इसी ओर संकेत करते हैं।

स्वयं प्रधानमंत्री ने एक जुलाई को पाकिस्तानी पत्रकारों के समक्ष पाकिस्तान के विशाल रक्षा बजट पर भारी चिंता व्यक्त की थी किन्तु अगले ही दिन श्री भुट्टो ने अपने रक्षा बजट में कटौती करने के एक भारतीय पत्रकार के सुझाव को यह कर ठुकरा दिया कि "यदि भारत अपने रक्षा व्यय में कटौती कर दे तो भी गत दिसम्बर के अनुभव के पश्चात पाकिस्तान के रक्षा बजट में कटौती का कोई औचित्य नहीं है।" क्या इस भाषा में से शांति का इरादा झलकता है?

कश्मीर प्रश्न के निपटारे को इस समय टालने और उसे भविष्य के लिए खुला रखने के पीछे श्री भुट्टो का जो मनोभाव है वह भी दो जुलाई के संवाददाता सम्मेलन में उभर कर सामने आ गया था। एक भारतीय संवाददाता के प्रश्न के उत्तर में श्री भुट्टो ने स्वीकार किया कि पहले भारत से प्रत्येक सम-

झौता वार्ता के समय पाकिस्तान कश्मीर समस्या को प्राथमिकता दिया करता था क्योंकि तब स्थिति पाकिस्तान के अनुकूल थी किन्तु अब वह उसे टालने पर बल दे रहा है क्योंकि स्थिति उसके प्रतिकूल है।

जिस भुट्टो ने सत्ता के लोभ में अपने देश को पराजय के मुंह में धकेल दिया, अयूब, याहिया और मुजीब सबको समय-समय पर धोखा दिया वह इन्दिरा जी एवं भारत को धोखा नहीं देगा, इसे कैसे माना जा सकता है?

देश इस विश्वासघात से नाराज है

निश्चय ही शिमला समझौते में काश्मीर के प्रश्न पर भारत ने मुंह की खाई है। इस समस्या को और भी उलझा दिया गया है। यह कैसा समझौता हुआ जिसमें हमने प्राप्त कुछ भी नहीं किया और वह सब खो दिया है जिससे हम इस भूखण्ड की टिकाऊ शान्ति अर्जित कर सकते थे। यह तो बिल्कुल 'बेमोल बिकने' जैसी बात है।

देश इससे नाराज है। देश इसे नापसन्द करता है। देश को इससे रंज है। लोगों को याद है प्रतिरक्षा मंत्री श्री जगजीवन राम तथा अनेक और महत्वपूर्ण लोगों की घोषणाएं जो उन्होंने युद्ध के दिनों में की थीं कि 'इस बार जीती हुई जमीन वापिस नहीं की जायेगी।' 'इस बार ताशकन्द जैसा समझौता नहीं होगा।' सैनिकों और जवानों ने विजय के गोल में खून का आखिरी कतरा तक बहा दिया, अपनी शक्ति की अंतिम इकाई तक लगा दी। पर आज उन वादों को भुला दिया गया और २५००० शहीदों की अनमोल बलिदान से अर्जित भूमि को व्यर्थ छोड़ दिया गया। यह शहीदों के साथ विश्वासघात है। यह उनके बलिदानों पर पानी फेरना है। यह समाज और देश के साथ विश्वासघात है।

सिन्धी शरणार्थियों से ऐहसानफरामोशी

इसका एक दुष्परिणाम और हुआ। सिंध के रहने वाले हिन्दू, जो २५ वर्षों से पाकिस्तानी हुक्मरानों और साम्प्रदायिक तत्वों के जुल्म झेल रहे थे; जो हत्या, बलात्कार, लूट-खसोट तथा अपमान के मारे थे; ने भारत के प्रतिरक्षा मंत्री का भरोसा कर भारत की सेना का साथ दिया और भारत के विजय का मार्ग प्रशस्त किया। सेना ने उनके सहयोग को सराहा। उन्हें प्रशंसा प्रमाण पत्र और तमगे दिए। आज वे सिन्धी एक लाख से भी बड़ी संख्या में शरणार्थी बने पड़े हैं। उनमें से ६० हजार सरकारी शिविरों में हैं। शेष मारे-मारे फिर रहे हैं। शिमला समझौते के बाद प्रधानमंत्री ने यह कहा कि इन सिन्धी शरणार्थियों को जाना पड़ेगा। राजस्थान के पुनर्वास मंत्री ने कहा कि उन्हें जबरदस्ती पाकिस्तान भेजा जायेगा।

संसद के बजट अधिवेशन में यह कहा गया था कि इन लोगों को नागरिकता देने के बारे में विचार किया जा रहा है। छालरों में तिरंगा फहराते हुए राजस्थान के मुख्यमंत्री ने यह आश्वासन दिया था कि उन्हें हर प्रकार से सहूलियत दी जायेगी और उन्हें वापिस नहीं भेजा जायेगा।

शिमला समझौते के बाद आज उन्हें मौत के मुंह में डालने की तैयारी की जा रही है। उनके बच्चों को स्कूलों में दाखिला नहीं दिया जा रहा। उनके जानवरों को चराने का निषेध कर दिया गया है।

यह इन हिन्दू सिन्धी शरणार्थियों के साथ भारत सरकार की न सिर्फ बेइन्साफी और अमानवीय व्यवहार है बल्कि ऐहसान फरामोशी भी है।

आगामी शिखर सम्मेलन

साफ है कि यह समझौता इस देश को बहुत भारी पड़ा है। और देश ने इसे अच्छी तरह समझना आरम्भ कर दिया है। लेकिन अब ऐसा प्रचार किया जा रहा है जिससे आगामी शिखर सम्मेलन में लोगों की आशा अटक जाय और शिमला समझौते की सड़ी लाश लोगों की आंखों से ओझल हो जाय।

आगामी शिखर में क्या होगा? इस समझौते की धारा-६ में उसके पूर्व होने वाली प्रतिनिधियों की बैठक के लिये तीन विषय वर्णित हैं:

(१) युद्धबन्दियों की वापसी

(२) जम्मू काश्मीर का अंतिम निपटारा

(३) राजनयिक सम्बन्ध पुनः कायम करना।

कोई भी यह समझ सकता है कि युद्धबन्दियों की वापसी और राजनयिक सम्बन्धों को पुनर्स्थापित करने की बात बहुत अहम नहीं है।

युद्धबन्दियों की वापसी के बारे में भुट्टो का आत्मविश्वास दृष्टव्य है। वे कहते हैं "जल्दी या देर से उन्हें पाकिस्तान लौटना ही है।" यही सभ्यता और समझदारी का रास्ता है। मैं नहीं मानता कि भारत में जनशक्ति की कमी है। कोई देश जमीन तो रख सकता है, पर युद्धबन्दियों को लम्बे समय तक नहीं रख सकता। भारत उन्हें दीर्घावधि तक नहीं रख सकता। मैं उन्हें वापिस लाकर रहूंगा। इस प्रश्न पर अंतर्राष्ट्रीय जनमत भारत के विरुद्ध होता जा रहा है। जब मैं 'जमीन' पांच महीनों में ले आया जिसे अयूब पांच वर्षों में नहीं ला सके तो युद्धबन्दियों को भी ले आऊंगा।"

निश्चय ही भुट्टो की बातों में दम है। यह भी सम्भव है कि भारत युद्धबन्दियों का मामला कुछ ज्यादा देर चलायें जैसा कि १२ जुलाई को श्रीमती गांधी की पत्रकार वार्ता से ध्वनित होता था। मगर अगले शिखर सम्मेलन में

युद्धबंदियों का मसला पाकिस्तान का पहले नम्बर का मसला रहेगा। राजनयिक सम्बन्धों के बारे में कोई विशेष कठिनाई नहीं आयेगी।

गुप्त समझौता हुआ है

पर 'जम्मू-काश्मीर विवाद' के अंतिम निपटारे में क्या होगा ?

जनसंघ के अध्यक्ष श्री अटल बिहारी वाजपेयी ने यह आरोप लगाया है कि शिमला में काश्मीर विवाद के अन्तिम निपटारे के बारे में एक गुप्त समझौता हुआ है।

यह शंका श्री अटल जी ने ही नहीं की है, बल्कि भूतपूर्व प्रतिरक्षा मन्त्री श्री कृष्ण मेनन तक ने अपने वक्तव्य में स्पष्ट रूप से इसे प्रकट किया है। देश के साथ यह बहुत बड़ा धोखा होने जा रहा है। भयानक धोखा। सिर्फ जनरोष ही इसे रोक सकता है।

भारत सरकार ने विदेशी दबाव में आकर यह समझौता किया है और विदेशी ताकतें काश्मीर पर कोई भारत विरोधी समझौता लादने की कोशिश में थी।

विदेशी दबाव

शिमला समझौता विदेशी हस्तक्षेप के तहत हुआ है। चार दिनों तक बातें चलती रहीं पर निष्फल रहीं। गतिरोध उत्पन्न हो गया। तमाम सम्बन्धित क्षेत्रों में बातों की विफलता पक्के तौर पर मान ली गई। और अन्त में श्रीमती गांधी और श्री भुट्टो के बीच १५ मिनट की बातों में यह समझौता हो गया। यह कौन से जादू का प्रभाव था कि जिसने यह चमत्कार किया ? निश्चय ही जिनेवा दबाव के कारण श्रीमती गांधी ने 'शिखर समझौते' का प्रस्ताव रखा उनके ही दबाव से यह संभव हुआ। यही कारण है कि स्वदेश लौटने के साथ ही श्री भुट्टो ने मास्को और वाशिंगटन को धन्यवाद दिया। ये धन्यवाद बताता है कि भुट्टो साहब इस समझौते के लिए इनके कृतज्ञ हैं।

सामरिक दृष्टि से हानिकारक

इस समझौते का एक सामरिक महत्व भी है। हमने तो शकरगढ़ के क्षेत्र में 'चूजे की गरदन' वाला वह इलाका पाकिस्तान को दे दिया जो दिसम्बर के भयंकरतम युद्ध के बाद जीता था। पर पाकिस्तान का छम्ब जोरियां क्षेत्र पर कब्जा है। वह तो हमारे क्षेत्र में अखनूर की संचार रेखा तक धंसा है। पर हमने वह क्षेत्र खाली कर दिया जहां से छम्ब जोरियां में बढ़ी हुई पाकिस्तानी फौज को पीछे से घेर दबोचा था और जिसके कारण इस क्षेत्र का पाकिस्तानी कब्जा ज्यादा घातक नहीं था। अब वह स्थिति नहीं रहेगी। पाकिस्तान की

सेना बहुत बेहतर स्थिति में होगी। सैनिक रणनीति के तमाम विशेषज्ञ यह कह रहे हैं कि 'चूजे की गरदन' वाला इलाका देना गलती है। आज गतिरोध उत्पन्न होता है तो पाकिस्तान काश्मीर के मामले में सामरिक दृष्टि से बेहतर स्थिति में होगा।

ताशकन्द और शिमला में आश्चर्यजनक समानतायें

पर आज तो सरकारी प्रचारतंत्र इस समझौते को देश की उदासीन, भयभीत और भोली जनता के गले में जोरजोर से उतारने का प्रयास कर रहा। सरकार अपनी सारी चतुराई इसके लिए ही लगा रही।

जबकि सच यह है कि इस शिमला समझौता और ताशकन्द समझौता में आश्चर्यजनक समानताएं इस प्रकार हैं :

(१) दोनों समझौते में स्थायी शान्ति की कामना की गई है। दोनों समझौतों की शब्दावली में भी आश्चर्यजनक समानता है।

(२) दोनों समझौते में वर्तमान विवादों को शान्तिपूर्ण तरीकों से हल करने की बात कही गई है।

(३) दोनों समझौतों में संयुक्त राष्ट्र संघ के सिद्धांतों और लक्ष्यों को समान रूप से मान्यता दी गई है।

(४) दोनों समझौतों में एक दूसरे देश के खिलाफ होने वाले प्रचार को रोकने का वादा किया गया है।

(५) दोनों समझौतों में पड़ोसी देश होने के नाते दोस्ताना ताल्लुकात बढ़ाने की बात कही गई है।

(६) दोनों में राजनयों के सामान्यीकरण की बात कही गई है।

(७) दोनों में व्यापार और आवा सुविधाओं के सामान्यीकरण का वादा किया गया है।

(८) दोनों में वैज्ञानिक और सांस्कृतिक आदान-प्रदान की बात कही गई है।

(९) दोनों में आर्थिक सहयोग को बढ़ाने का फैसला किया गया है।

(१०) दोनों में इन उद्देश्यों तथा स्थायी शान्ति के लिए सेना के वापसी का संकल्प है। शिमला समझौता में अन्तर्राष्ट्रीय सीमा तक और ताशकन्द समझौते में ५ अगस्त की स्थिति तक। दोनों में लागू करने की तिथियां निश्चित की गई हैं।

ये समझौते भावों और शब्दावली में लगभग एक प्रकार के हैं। ताशकन्द समझौते में कम से कम जब्त की गई गालियत की वापसी का जिक्र था पर शिमला समझौता में इस प्रकार की किसी बात की चर्चा नहीं है।

मंगल कामनाओं की अकाल मृत्यु

पाकिस्तान के तुष्टीकरण में नया अध्याय जोड़ने वाले इतिहासान्ध और अदूरदर्शी समझौता पसन्द शासक इस बात पर चाहे जितना इतरा लें कि नकली और क्षणिक शान्ति के इस संगम में भारत के अनेक विरोधी कहे जाने वाले दल भी सुर मिला रहे हैं, पर इससे यथार्थ की कठोरता में रत्ती भर भी अन्तर नहीं आता। १९४७ में हमने शान्ति के नाम पर ही विभाजन जैसा वीभत्सतम अपराध किया था, पर शान्ति नहीं मिली। नेहरू-लियाकत समझौता, नेहरू-नून समझौता, नहरी-पानी समझौता से लेकर ताशकन्द-समझौता तक हमने शान्ति एवं मित्रता की व्यर्थ तलाश में राष्ट्रीय हितों की कुर्बानियां दी हैं। हर बार सरकार, सरकारी नेता, सरकार द्वारा पालित पोषित विरोधी दल, पाकिस्तानपरस्त तत्व तथा विदेशनिष्ठ तत्वों ने शान्ति की मनगढ़न्त भविष्यवाणियां की हैं। हर बार जनसंघ ने चेतावनी का स्वर बुलन्द किया है। हर बार सरकारी प्रचारतंत्र ने शान्ति का कोहरा फैलाकर यथार्थ की आवाज को दबाने-ढकने का प्रयास किया है। और हर बार पाकिस्तान के साथ शान्ति की मंगलकामनाओं की अकाल मृत्यु हुई है। फिर भी हर बार हमने इतिहास के सबकों को अनदेखा किया है। इस समझौते को अब जनता [illegible] है। शान्ति के नाम पर लादे गये इस समर्पण की लागत को भी देना है। हमें शहीदों के बलिदान को व्यर्थ नहीं होने देना है। जनता जागे, उठे और शिमला समर्पण विरोधी आन्दोलन को पूरे जोर-शोर से सक्रिय योगदान दे।

युद्धों, युद्धविरामों और शिखर सम्मेलनों का सिलसिला

१४ नवम्बर, १९५४ को लखनऊ में इस्कन्दर मिर्जा और श्री गुलाम मोहम्मद ने लगभग वही कहा था जो जनाब भुट्टो आज कह रहे हैं कि—"हम पिछली बातों को भूल जायें और नया अध्याय प्रारम्भ करें।"

लेकिन विडम्बना यह है कि जैसे ही पिछली बातों को भूल कर शान्ति का नया अध्याय शुरू करते हैं और पाकिस्तान की गर्दन छोड़ते हैं, पाकिस्तान बेहयाई से फिर छेड़ कर पुरानी बात का सिलसिला जोड़ देता है। और फलतः इन २५ वर्षों के भारत-पाक सम्बन्धों की सड़क शान्ति के कब्रिस्तानों से भरी है। युद्धक्षेत्रों के बीच में आपको शिखर वार्ताओं की दुर्गन्धमय लाशें नजर आयेंगी। दिल्ली से बार-बार भेजे गये 'युद्धवर्जन संधि' के महत्वपूर्ण दस्तावेज इस सड़क पर इतस्ततः बिखरे हुए मिलेंगे।

पाकिस्तान की ओर से युद्धों की तैयारियाँ और युद्धों का एक अन्तहीन सिलसिला, भारत की ओर से शान्ति की आराधना, युद्ध वर्जन सन्धि का प्रस्ताव। फिर पाकिस्तान की पराजय, युद्ध विराम, शिखर सम्मेलन और सौदा—फिर वही युद्ध—यही इस भूखण्ड और कालखण्ड की नियति रही है। क्या इस नियति में शिमला कोई परिवर्तन करेगा?

पहला हमला

न जाने कितने सम्मेलनों के बाद रोज-रोज के खूनखराबे, हिंसा, दंगे से छुटकारा के लिए भारत ने विभाजन स्वीकार किया। १५ अगस्त को विभाजन हुआ। दसियों लाख आदमियों की जानें गयीं। तब कहीं सांस लेने लायक हालत बनी थी कि २७ अक्तूबर, १९४७ को पाकिस्तानी फौज ने कबाइलियों के आवरण में भारत के जम्मू-काश्मीर राज्य पर हमला बोल दिया। तब से आज तक काश्मीर में युद्ध की मनुष्य भक्षी आग कभी चुप नहीं हुई। वैसे उसे औपचारिक रूप से १ जनवरी, १९४९ को चुप कर दिया गया था। मगर यह तो ऐसा युद्ध है जो शुरू एक बार हुआ मगर अनेक 'सीजफायरों' के बाद आज भी चालू है। शिखर सम्मेलन होते रहे। इस पर उनका कोई असर नहीं हुआ।

नेहरू-लियाकत समझौता और उसका नतीजा

१९५० में एक शिखर सम्मेलन हुआ २ से ८ अप्रैल तक नयी दिल्ली में,

इसमें एक समझौता हुआ। इतिहास इसे 'नेहरू-लियाकत समझौते' के नाम से जानता है। इस समझौते की भी अपनी एक कहानी है। हिन्दू शरणार्थियों की निकासी को देखकर तत्कालीन उप प्रधानमन्त्री सरदार पटेल ने पाकिस्तान से इन्हें बसाने के लिए जमीन लेने की धमकी दी थी। पाकिस्तान और लियाकत अली सरदार की धमकी का अर्थ जानते थे। वो दौड़े-दौड़े दिल्ली आए थे और तब हुआ था यह समझौता। दोनों देश अपने-अपने मजहबी अल्पसंख्यकों की सुरक्षा के लिए प्रतिबद्ध हो गए। अप्रैल १९५१ में तत्कालीन प्रधान मंत्री श्री० प० नेहरू कराची भी गए थे। वहां भी दोनों देशों के इन शीर्ष नेताओं में वार्ता हुई थी। पर क्या उनका कोई नतीजा निकला? क्या पाकिस्तान में अल्पसंख्यक कभी सुरक्षित रहे? सामूहिक हत्याओं और जाति हत्या का ही परिणाम था कि पाकिस्तान से हिन्दुओं का निरन्तर पलायन होता रहा। ये आंकड़े गवाह हैं। १९५० में १६ लाख हिन्दू भारत आने को बाध्य हुए। १९५१ में ९ लाख हिन्दू दंगा करके भगा दिये गए। १९५२ में तीन लाख, १९५३ में ७६ हजार, १९५४ में सवा लाख, १९५५ में सवा दो लाख, १९५६ में सवा तीन लाख, १९६४ में ६ लाख हिन्दू दंगा करके खदेड़ दिए गए।

यह था परिणाम नेहरू-लियाकत शिखर वार्ता का। यह था नतीजा उस नेहरू-लियाकत संधि का, जिसकी सफलता के तराने उस काल में बड़े जोर-शोर से गाए गए।

२५ जुलाई, १९५३ को पाकिस्तानी प्रधानमंत्री मोहम्मद अली व प्रधान मंत्री नेहरू की (शिखर) वार्ता हुई। दोनों ने तमाम झगड़ों को वार्ता के द्वारा हल करना स्वीकार किया। पर इसका कोई नतीजा नहीं निकला।

नहरी पानी समझौते का जवाब रण-कच्छ में

छठे दशक के अन्त में नहरी पानी संधि की सहूलियतों को प्राप्त करने के लिए पाकिस्तान ने जबरदस्त विनम्रता धारण कर ली।

१९६० में १९ सितम्बर को नेहरू-अयूब वार्ता कराची में हुई। वार्ता पाकिस्तान के पक्ष में अभूतपूर्व ढंग से सफल रही। वहां भारत ने अपने राजस्थानी रेगिस्तान के मुंह से पानी छीनकर पाकिस्तान को दिया। नहरी पानी संधि हुई। इस एकतरफा सद्भाव की प्रतिक्रिया प्रकट हुई ५ वर्ष बाद रण-कच्छ में पाकिस्तानी हमले से।

जनवरी १९६५ में रण-कच्छ के भारतीय क्षेत्र कंजरकोट पर पाकिस्तान ने कब्जा कर लिया। ९ अप्रैल, १९६५ को दो पाकिस्तानी बटालियनों ने वहीं और सरदार पोस्ट पर हमला किया। ३० जून को युद्ध विराम हुआ। यह युद्ध विराम भी एक नए युद्ध की तैयारी के लिए हुआ। ५ अगस्त, १९६५ में

पाकिस्तान ने समूचे कश्मीर में हजारों की संख्या में घुसपैठिए भेजे। एक सितम्बर को छम्ब जोड़ियां पर पाकिस्तानी हमला हुआ। ५ सितम्बर, १९६५ को पूरी पश्चिमी सीमा जलने लगी। बड़ी जबरदस्त लड़ाई चली। भारतीय सेनाएं लाहौर के दरवाजे तक पहुंच गई थीं। २२ सितम्बर को फिर युद्ध विराम हुआ। और फिर शिखर वार्ता। पाकिस्तान के राष्ट्रपति अयूब खां और भारत के प्रधान मंत्री श्री लाल बहादुर शास्त्री दोनों ताशकन्द में रूसी प्रधानमंत्री कोसिगिन की उपस्थिति में मिले। १० जनवरी, १९६६ को ताशकंद संधि हुई। तदनुसार सेनाएं अपनी-अपनी जगह लौट गयीं। पाकिस्तान ने युद्ध में जो खोया था, उसे पुनः प्राप्त कर लिया। पाकिस्तान ने कब्जे में की हुई भारत की सम्पत्ति वापस नहीं की। पर भारत ने लौटा दिया। मित्रता, शान्ति, सद्भाव, पड़ोसीपन के ताशकन्दी अन्दाज, पाकिस्तान कुछ ही समय में भूल गया और फिर से शत्रुता और युद्ध के मार्ग पर चल पड़ा। हमने ताशकन्द के शिखर सम्मेलन में युद्ध में जीती हुई जमीन, विजेता प्रधानमंत्री लाल बहादुर शास्त्री तथा शान्ति सब कुछ खोई। पाकिस्तान ने सब कुछ पाया। नये सिरे से युद्ध की तैयारी में जुट गया। दुनिया भर से हथियार इकट्ठे करने लगा।

१९७१ की लड़ाई और १९७२ की वार्ता के बीच में

१९७१ में भारत पर एक करोड़ शरणार्थियों को धकेल दिया। दिसम्बर में पूर्वी और पश्चिमी सीमा पर फिर से युद्ध की लपटें उठने लगीं। १६ दिसम्बर को ढाका में एक लाख पाकिस्तानी फौजों के समर्पण के एक दिन बाद पश्चिमी सीमा पर भी युद्ध विराम हुआ। यह युद्ध का पूर्ण विराम नहीं था ठीक वैसे ही जैसे इसके पहले वाले युद्ध विराम भी युद्ध के अर्द्धविराम ही थे। पराजित होकर भी पाकिस्तान युद्ध से बाज नहीं आया और छिथवाल की दो चौकियों पर अभी हाल में भी कब्जा किया है।

शान्ति की इच्छा और बेहतर पड़ोसीपने के लिए अध्यायों वाली भुट्टो की घोषणाएं कितनी ईमानदार हैं यह तो बस इससे ही समझा जा सकता है कि इस पराजय के बाद उसने सेना की दो नई डिवीजनें खड़ी की हैं। दो और डिवीजनें खड़ी करने की योजनाएं हैं। इस युद्ध में लड़ाकू विमान, टैंक आदि युद्ध सामग्री का जितना भी नुकसान हुआ था उससे कहीं अधिक की पूर्ति पाकिस्तान ने कर ली है। टैंक और विमानों की संख्या तो ३ दिसम्बर के पूर्व की स्थिति से कहीं अच्छी है। चीन तथा सीटो-सेन्टो मुल्कों व पश्चिमी देशों से बहुत ही आधुनिक विमान उसे पुनः प्राप्त हुए हैं। फ्रांसिसी मीराजों की भी प्रतिपूर्ति हो गई है। इस वर्ष के पाकिस्तानी बजट का प्रतिरक्षा व्यय अब तक के प्रतिरक्षा बजट से सबसे अधिक अर्थात् ४४५ करोड़ का है। पाकिस्तान भारत के मुकाबले प्रति व्यक्ति प्रतिरक्षा पर चार गुना अधिक खर्च कर रहा है। श्री भुट्टो पाकिस्तान की फौज को एशिया की सर्वोत्तम सेना बना देने की घोषणा कर चुके हैं। वे युद्धवर्जन प्रस्ताव के लिए क्यों प्रस्तुत

हो ! और युद्ध की पूरी तैयारियों को चलाते रहते हुए भुट्टो साहब शिमला से "निष्कलंक शांति" का समझौता कर गए। शांति की प्रतिपूर्ति करके भुट्टो साहब शिमला आते थे। उनकी वाणी में पराजित मुल्क के राष्ट्रपति की विनम्रता का नितान्त अभाव था। उसके स्थान पर बराबरी की स्थिति पर खड़े रहकर वे वरिष्ठता के अक्खड़पन को ओढ़ कर खड़े थे और जैसे ही उन्हें मौका मिला लाहौर हवाई अड्डे पर उतरते ही उन्होंने कहा—कहिए बाप मुक्त हूँ। मैंने 'युद्धवर्जन संधि' नहीं की है। जनता यह सुनकर आह्लादित हो गई।

भारत के युद्धवर्जन प्रस्तावों की नियति

भुट्टो ही नहीं, आज तक पाकिस्तान के किसी भी राष्ट्रपति या प्रधानमंत्रियों ने भारत के युद्धवर्जन संधि के बार-बार रखे गए प्रस्तावों को स्वीकार नहीं किया। भारत ने १९४८ से अब तक अनेक बार युद्धवर्जन संधि का प्रस्ताव पाकिस्तान के सम्मुख रखा है।

२२ दिसम्बर, १९४९ को भारत के प्रधानमंत्री ने युद्धवर्जन संधि का मसौदा प्रस्तावित किया। पर पाकिस्तान ने उसे अस्वीकार कर दिया। १९५६ में उन्होंने पुनः युद्धवर्जन संधि का प्रस्ताव रखा। पर उसका भी वही नतीजा निकला। उनके बाद नए प्रधानमंत्री लाल बहादुर शास्त्री ने भी अपने छोटे से कार्यकाल में अनेक बार युद्धवर्जन प्रस्ताव रखे। १९६४ के स्वतन्त्रता दिवस के अवसर पर भी यह प्रस्ताव रखा गया। पर जेहादी मुहिमवाद से आप्लावित पाकिस्तानी हुक्मरान काश्मीर पर हमेशा युद्ध लड़ने की डींगें मारते रहे। युद्धवर्जन और शान्ति प्रस्तावों की कोई चिन्ता उन्होंने कभी नहीं की।

ताशकन्द घोषणा की तीसरी वर्षगांठ पर भाषण करते हुए प्रधानमंत्री श्रीमती गांधी ने भी वैसा ही युद्धवर्जन संकल्प प्रस्तुत किया। पर भुट्टो साहब का हजार साल तक लड़ने का ऐलान जहां चल रहा हो, वहां श्रीमती गांधी का प्रस्ताव नक्कारखाने में तूती की आवाज ही सिद्ध हुआ। असल में १६ दिसम्बर, १९७१ के दिन ढाका समर्पण के बाद भी भारत ने ही एकतरफा युद्ध विराम घोषित किया वरना पाकिस्तान तो आक्रामक तेवर से लड़ने को तैयार था ही। काश कि उसकी तमन्ना पूरी की जाती।

शिमला वार्ता के लिए भारतीय आग्रह

शिमला के बीज मिलने पर इन्दिरा-भुट्टो शिखर वार्ता में भी पाकिस्तान की कोई खास ईमानदार दिलचस्पी थी, ऐसा नहीं है। इस शिखर वार्ता के लिए भारत ने ही पहल की थी या उससे पहल करायी गयी थी। यह पहल गलत थी या सही थी। यह बात अलग है। मगर पहल भारत ने ही की थी।

१४ फरवरी को ही भारत की प्रधानमंत्री ने संयुक्त राष्ट्रसंघ के महासचिव को पत्र लिखकर बताया कि भारत किसी भी स्तर पर पाकिस्तान से सीधी बातें कर मामलों को तय करना चाहता है। ४ अप्रैल को प्रधानमंत्री श्रीमती गांधी ने शिखर वार्ता के लिए द्विपक्षीय वार्ता की बात कही। ६ अप्रैल को पाकिस्तान ने यह तो माना कि श्रीमती गांधी का पत्र मिला है पर अनुकूल प्रतिक्रिया प्रकट नहीं की। २५-२८ अप्रैल तक भारत के नीति निर्धारण समिति के अध्यक्ष श्री डी० पी० धर ने पाकिस्तान में दूत स्तर की वार्ता की। श्री

भुट्टो से भी मिले। मई या जून के प्रथम सप्ताह में शिखर वार्ता का निर्णय लिया गया। ७ मई को भुट्टो ने शिखर सम्मेलन की तिथि इकतरफा ढंग से रद्द कर दी। स्वयं विदेश यात्रा पर रवाना हो गए। फिर १० मई को प्रधान मन्त्री ने ही श्री भुट्टो को शिखर वार्ता के लिए तारीख तय करने को फिर लिखा। तब कहीं जाकर २८ जून की तारीख तय हुई। शिखर वार्ता के लिए पग पग पर भारतीय प्रेरणा स्पष्ट है। श्रीमती गांधी ही बढ़ चढ़कर शिखर वार्ता के लिए अतिरिक्त उत्सुकता प्रकट करती रहीं। एक विजेता देश के प्रधान मन्त्री के नाते यह शोभा देने वाली बात है या नहीं, यह जुदा बात है। मगर उनकी उत्सुकता और पहल से इन्कार नहीं की जा सकती।

इसके विपरीत राष्ट्रपति भुट्टो की अड़ंगेबाजियां स्पष्ट हैं। फरवरी में सीधी वार्ता की बात को टालते रहे और उनकी आशा भरी नजर त्रिकोण-बाजू वार्ता पर टिकी रही। वार्ता के भारतीय प्रस्ताव को उन्होंने ए० एफ० पी० को एक भेंटवार्ता में पोलैण्ड की वार्ता को दुष्प्रभावित करने वाला बताया।

२६ फरवरी को भारतीय प्रस्ताव के बारे में पाकिस्तान ने कुछ स्पष्टीकरण मांगा। एक मार्च को उन्होंने विचार-विमर्श के लिए (पू० पाकिस्तान) बंगला देश से भारत की फौजों की वापसी की शर्त रख दी। ११ मार्च को आपने एक ब्रितानी पत्रकार को बताया कि वह दिल्ली जाकर बेइज्जत होना नहीं चाहते। अप्रैल के प्रथम सप्ताह में भुट्टो ने भारत से मैत्री सम्बन्ध स्थापित करने और वार्ता के बारे में कुछ-कुछ नरम विचार प्रकट किये। उन्होंने वार्ता के बारे में सकारात्मक जवाब भी नयी दिल्ली को भेजा तब तक आप मास्को से हो आए थे। लेकिन फिर २१ अप्रैल को इस वार्ता के लिए युद्धबंदियों की रिहाई का सवाल जोड़ दिया। २४ अप्रैल को काश्मीर और युद्धबंदी दोनों सवाल को वार्ता से विशेष रूप से नत्थी कर दिया। मतलब यह कि वार्ता को लेकर आने वाले महीने भर तक भी भुट्टो पैंतरों तरह की बात करते रहे। सारी वार्ता की सफलता विफलता की सारी जिम्मेदारी भारत पर थोप दी। सारी कश्मीर के आत्मनिर्णय का उद्घोष दोहरा दिया। मतलब यह कि शिखर वार्ता के लिए जिस सात्विक शांति का रुख दिल्ली के नेताओं ने अपनाया, ठीक उसके विपरीत श्री भुट्टो शिखर वार्ता के बारे में अनाप-शनाप और अनर्गल बोलते रहे थे।

ताशकन्द का १९७२ संस्करण और फिर वही जंगी तराने

असल में शिमला में भी भुट्टो अपनी समूची वाक् चातुरी और अभिनय कला का उपयोग अपने युद्धबंदियों को मुक्त कराने तथा हस्तगत क्षेत्र से सेना की वापसी के लिए कर रहे थे। और उन्हें सफलता भी मिली। समझौते के बाद पाकिस्तान लौटने के साथ ही उन्होंने अनेक मामले में अपने तेवर बदले। राष्ट्रीय असेम्बली में काश्मीर के लिये खून बहाने वाला शिमला समझौता की पुष्टि में दिया गया भाषण असल में इसकी हत्या का कारण बन गया है।

भारत-पाक-युद्ध, युद्ध-विराम तथा शिखर सम्मेलनों का सिलसिला

अक्तूबर, १९४७	पाकिस्तानी फौजियों का काश्मीर पर धावा एवं एक तिहाई काश्मीर पर कब्जा
जनवरी, १९४८	काश्मीर में युद्ध विराम
अप्रैल, १९५०	नेहरू-लियाकत सन्धि
अगस्त, १९५०	लियाकत अली ने सर आवेन का सीमित जनमत संग्रह का प्रस्ताव ठुकराया
नवम्बर, १९५०	पाक ने युद्ध वर्जन सन्धि का प्रस्ताव ठुकराया
जुलाई-अगस्त, १९५३	नेहरू-मोहम्मद अली शिखर वार्ता
सितम्बर, १९५८	नेहरू-नून समझौता (बेरुबाड़ी का पाकिस्तान को दान)
सितम्बर, १९५९	नेहरू-अयूब-वार्ता
सितम्बर, १९६०	नहरी-पानी-समझौता
जनवरी, १९६५	कच्छ पर पाकिस्तान का हमला
३० जून, १९६५	लन्दन में शास्त्री और अयूब द्वारा युद्ध विराम समझौते पर हस्ताक्षर
अगस्त, १९६५	काश्मीर में घुसपैठियों का प्रवेश छम्ब जोरियां पर हमला
२३, सितम्बर, १९६५	युद्ध-विराम लागू
१० जनवरी, १९६६	ताशकन्द-समझौता
३ दिसम्बर, १९७१	भारत पर पाकिस्तान द्वारा युद्ध की घोषणा
१७ दिसम्बर, १९७१	युद्ध विराम का भारतीय प्रस्ताव पाक ने स्वीकारा
२ जुलाई, १९७२	शिमला समझौता
१४ जुलाई, १९७२	राष्ट्रीय असेम्बली में भुट्टो द्वारा काश्मीरियों को भड़काने वाला भाषण तथा काश्मीर के लिए पाक द्वारा खून बहाने का आश्वासन

नेताओं की शंकाएं

इतिहास से सबक नहीं सीखा

—आचार्य जे०बी० कृपलानी

क्या लोकतन्त्र में निर्वाचित राजनीतिज्ञ के शब्दों पर विश्वास करना चाहिए? भारत में हमारा अनुभव बताता है कि उन पर विश्वास नहीं किया जा सकता।

सन् १९६० में जब लद्दाख में हमारी हजारों वर्गमील भूमि कम्युनिस्ट चीन के हाथ गंवा दी गई थी, तब हमारे प्रथम प्रधानमन्त्री श्री जवाहरलाल नेहरू ने जनता की भावनाओं को शान्त करने के लिए संसद् में घोषणा की थी कि भारत की एक इंच भी भूमि को विदेशी कब्जे में नहीं रहने दिया जाएगा। सदन के सब वर्गों ने तालियों की गड़गड़ाहट के साथ उनकी इस घोषणा का स्वागत किया था। इस घोषणा के बाद दस वर्ष से अधिक गुजर चुके, किन्तु चीन को गंवाई हुई हजारों वर्गमील भूमि का एक इंच भी भारत वापस नहीं करा सका।

शास्त्री जी का वादा

१९६५ में पाकिस्तानी आक्रमण के पश्चात् युद्ध में हमारे वीर जवानों ने उस भूमि का कुछ अंश, जो हमारी ही थी और जिस पर पाकिस्तान ने विश्वासघातपूर्वक कब्जा जमा रखा था, पुनः वापस ले लिया। तब भी हमारे तत्कालीन प्रधानमन्त्री श्री लाल बहादुर शास्त्री ने संसद् के भीतर एवं बाहर बार-बार यह घोषणा की कि यह भूमि हमारी है और हम उसे पाकिस्तान को कदापि नहीं वापस करेंगे। किन्तु ताशकन्द में जाकर उन्होंने जनता को दिए गए इस पवित्र आश्वासन का उल्लंघन किया और काश्मीर की विजित भूमि को पाकिस्तान को लौटा दिया।

शिमला समझौता : खोखले शब्दों का पुलन्दा

हमारी जनता और वीर सेना के साथ विश्वासघात का यह नवीनतम कृत्य शिमला में हमारे प्रतिनिधियों ने पाकिस्तान के प्रतिनिधियों के साथ मिलकर किया। पाकिस्तान के विरुद्ध भारत की पिछली लड़ाई अब तक की सबसे महंगी रही है। हमारे प्रतिरक्षा एवं विदेश मन्त्री ने ही नहीं, स्वयं प्रधान मन्त्री ने भी बार-बार कहा था कि इस बार पाकिस्तान से वार्ता होगी केवल एक शर्त पर कि सभी भारत-पाक विवादों का स्थायी हल खोजते हुए एक संकुल समझौता किया जाए। किन्तु शिमला वार्ता में 'संकुल समझौते' का एक बार भी उल्लेख नहीं किया गया और जो समझौता निकल कर आया उसमें 'शांतिपूर्ण सह-अस्तित्व', 'एक-दूसरे के आंतरिक मामलों में अहस्तक्षेप', 'एक दूसरे की क्षेत्रीय अखंडता, प्रभुसत्ता तथा राजनीतिक स्वतन्त्रता का सम्मान', जैसे लुभावने वाक्यों को बार बार दुहराने के अतिरिक्त कुछ भी ठोस नहीं है।

युद्ध-वर्जन सन्धि नहीं

—श्री वी० के० कृष्ण मेनन

भूतपूर्व प्रतिरक्षा मन्त्री तथा भारत-पाक समस्या के विशेष ज्ञाता श्री कृष्ण मेनन ने कहा है कि अगर काश्मीर का विभाजन किया जाता है तो इसका अर्थ भारत की भूमि को पाकिस्तान को समर्पित कर देना होगा। इसे बिना भारतीय संविधान में संशोधन किए लागू नहीं किया जा सकता।

श्री मेनन ने कहा है कि हमेशा ही भारत का कहना यह रहा है कि पाकिस्तान को काश्मीर पर से अपना कब्जा छोड़ हमला समाप्त करना चाहिए और जमीन लौटा देनी चाहिए।

किसी भी हालत में ऐसा कोई भी समझौता जो भारत की सार्वभौमिकता को परिसीमित करता हो, भारतीय जनता को स्वीकार नहीं करना चाहिए।

श्री मेनन ने कहा है कि शिखर समझौता में भारत और पाकिस्तान के मध्य बल प्रयोग न करने का अर्थ पाकिस्तान के लिए युद्धवर्जन सन्धि नहीं है। पाकिस्तान सिर्फ पाकिस्तान ही नहीं है। बल्कि उसके साथ चीन और अन्य देश भी हैं।

शिमला समझौते के पूर्व प्रधानमन्त्री तथा अन्य लोगों के द्वारा बराबर यह कहा गया कि इस बार संकुल समझौता होगा और टुकड़े-टुकड़े में समस्या को नहीं देखा जायेगा। पर विजयी देश भारत ने बड़ी सरलता से पाकिस्तान का कदम-दर-कदम वाला दृष्टिकोण स्वीकार कर लिया।

ताशकन्द से बदतर

—श्री समर गुहा

संसोपा के नेता संसद सदस्य समर गुहा ने कहा है कि यह समझौता ताशकन्द समझौते से भी बदतर है। उन्होंने इस पर विचार करने के लिए संसद का विशेष सत्र आमंत्रित करने का आग्रह किया। उन्होंने कहा कि पाकिस्तान अपनी सैनिक तैयारियां कम नहीं करने जा रहा।

जार्ज फर्नान्डीज

संसोपा नेता श्री फर्नान्डीज ने कहा है कि शिखर सम्मेलन बुरी तरह असफल हुआ है।

भुट्टो अविश्वसनीय

—श्री चरणसिंह

भारतीय क्रांति दल के नेता चौधरी चरणसिंह ने कहा है कि समझौता पाकिस्तान के हक में गया। भुट्टो दो में से एक उद्देश्य प्राप्त कर ले गए। जहां तक भारत-पाक मामलों में तीसरे पक्ष को नहीं लाने या विवाद के निपटाने के लिए हिंसा का उपयोग न करने की बात है, उसकी क्या पैठ है। महज भुट्टो के शब्द पर कितना विश्वास किया जाय? २५ वर्षों का इतिहास बताता है कि इन शब्दों का मूल्य क्या है?

इनके अलावा विख्यात धाराशास्त्री एवं संसदज्ञ श्री लक्ष्मीमल सिंघवी, सोपा नेता श्री मधु लिमये तथा श्री राजनारायण आदि ने इस समझौते का विरोध किया।

समाचार-पत्रों की शंकाएं

सम्पादकीय कतरनें

सरकारी प्रचार-तन्त्र के व्यापक प्रभाव, जबर्दस्त दबाव तथा भयग्रस्त वातावरण के बावजूद भारत के समाचार-पत्रों ने अपनी-अपनी शंकाएं सामने रखी हैं। यहां दिल्ली, बम्बई, कलकत्ता, मद्रास आदि केन्द्रों से निकलने वाले अखबारों के सम्पादकीय टिप्पणियों के कुछ नमूने दिए जा रहे हैं। प्रारम्भ में बी०बी०सी० लन्दन की टिप्पणी दी जा रही है।

—सम्पादक

बी०बी०सी० लन्दन

"शिमला शिखर सम्मेलन भुट्टो के पक्ष में एक जबर्दस्त कूटनीतिक विजय सिद्ध हुआ है। समझौते की टेबुल पर उन्होंने भारत पर एक प्रशंसनीय राजनैतिक कूटनीतिक विजय हासिल की है। शिमला के खेल में भारत के पास तुरुप के सबसे बढ़िया पत्ते थे। लेकिन भुट्टो खेल और रबर दोनों जीत कर ले गए।"

स्टेट्समैन

दिल्ली ४ जुलाई,

"'''बहुत परिश्रम के बाद शिमला शिखर वार्ता से एक समझौता तो निकला मगर वह हल नहीं।''' "संघर्ष और टकराव" की नीति का परित्याग करके श्री भुट्टो ने कुछ भी नहीं गंवाया है क्योंकि पाकिस्तान अभी इस स्थिति में नहीं है कि वह संघर्ष के द्वारा अपने अनुकूल निर्णय करवा सके। निःसन्देह यह आश्वासन उन्हें अपने युद्धोन्मादी लोगों को शान्त रखने में सहायक होगा। युद्ध में 'पराजय' के बाद न तो हिंसा-त्याग की इच्छा है और न ही सेनाओं की वापसी या कूटनीतिक सम्बन्धों को पुनः जारी किया जाना अथवा न ही 'शान्तिपूर्ण मार्ग' की ओर अनायास झुकाव ही अस्वाभाविक बात है।'''"

दैनिक हिन्दुस्तान

दिल्ली ४ जुलाई,

"''शिखर समझौते के फलस्वरूप विजित प्रदेश खाली करने की बात ही सबसे ठोस और प्रत्यक्ष लाभ है और यह लाभ एकान्त रूप से पाकिस्तान के खाते में जाता है। अगले किस लाभ की अपेक्षा में भारत इस विजित प्रदेश को छोड़ने के लिए राजी हो गया, शिखर समझौते में इसका कोई उल्लेख नहीं। कश्मीर प्रश्न के हल की संभावना को इसके साथ तौलना कल्पित परोक्ष को साकार प्रत्यक्ष के साथ तौलने की ही नासमझदारी होगी।"

हिन्दू

मद्रास ४ जुलाई,

"''''दोनों पक्षों ने बल प्रयोग को न अपनाने और किसी विवाद के उठने पर आपसी द्विपक्षीय बातचीत करने का रास्ता अपनाने का निश्चय किया है। किन्तु क्योंकि ऐसे ही वादे ताशकन्द में भी किए गए थे और उन्हें तोड़ा भी गया था, इसलिए ऐसे बहुत लोग हो सकते हैं जो इन कागजी वादों की सत्यता में शंका करने के अधिकारी हैं। वे लोग इस तथ्य को भी प्रस्तुत कर सकते हैं कि यद्यपि भारत विगत युद्ध में जीती हुई विशाल भूमि को वापस करने और अपनी सेनाओं को अन्तर्राष्ट्रीय सीमा से पीछे हटाने के लिए राजी हो गया है तथापि वह पाकिस्तान को इस बात के लिए कतई राजी नहीं कर सका है कि कश्मीर में भी एक तर्कसंगत एवं स्थायी सीमा रेखा निर्धारित कर ली जाए। शिमला समझौते ने इस पूरे प्रश्न को बाद की आपसी वार्ताओं और निर्णय के लिए खुला छोड़ दिया है। इसलिए तनिक भी आश्चर्य नहीं होना चाहिए कि जनसंघ नेता श्री अटलबिहारी वाजपेयी ने शिमला समझौते को भारत की ओर से 'सेल आउट' (बेमोल बिकने) की संज्ञा दे दी है। उनकी तरह सोचने वाले संगीभक्त निर्विवाद रूप से यह कहेंगे कि विजित क्षेत्रों की वापसी से पहले भारत को कश्मीर का मामला तय कर लेना चाहिए था। आखिर, अधिकारी प्रवक्ता भी इन सब दिनों में जिस "संकुल समझौते" (पैकेज डील) की चर्चा करते रहे हैं, उसमें भी यही अभिप्रेत था।'''"

फ्री प्रेस जरनल

बम्बई ४ जुलाई,

"....यदि एक भी पक्ष ने किसी भी कारण से समझौते में वर्णित "मैत्रीपूर्ण" एवं मधुर सम्बन्धों की वृद्धि तथा उपमहाद्वीप में स्थायी शान्ति की स्थापना के लिए प्रयत्न करने के अपने संकल्प पर अमल करने से इन्कार कर दिया तो यह समझौता एक रद्दी कागज भर रह जाएगा। विश्व जानता है कि बल प्रयोग द्वारा इस यथास्थिति को बदलने के पाकिस्तानी प्रयत्नों के फलस्वरूप ही यह उपमहाद्वीप तीन बार युद्धों में डूब चुका है।...."

"शिमला समझौते के अनुसार पाकिस्तान कश्मीर में शान्तिपूर्ण रास्ते से परिवर्तन लाने का प्रयत्न कर सकता है और ऐसा करने का उसका निश्चित इरादा है भी किन्तु यह आवश्यक नहीं कि इसके लिए वह द्विपक्षीय वार्ता तक ही सीमित रहे। समझौते में किया गया यह प्रावधान कि "दोनों देश अपने विवादों को द्विपक्षीय वार्ता के शान्तिपूर्ण मार्ग से या किसी ऐसे मार्ग से जिस पर दोनों की सहमति हो", हम कहेंगे, निश्चय ही पाकिस्तान के आग्रह पर जोड़ा गया है और यह तीसरे पक्ष के प्रवेश का मार्ग खुला छोड़ता है। निस्सन्देह, भारत कभी इसके लिए राजी नहीं होगा किन्तु इस पारस्परिक सहमति के अभाव में क्या पाकिस्तान समझौते के इस अंश का उल्लंघन करने को स्वतन्त्र नहीं हो जाएगा?...."

मदरलैंड

दिल्ली ४ जुलाई,

"....हमें कहना है कि हम यह समझने में असफल रहे हैं कि भारत सरकार १९७१ के युद्ध में जीती हुई भूमि को लौटाने के लिए रजामन्द क्यों हो गई जबकि पाकिस्तान १९४७-४८ में जबर्दस्त कब्जाई गई भारतीय भूमि को खाली करने को तैयार नहीं है। "जम्मू-कश्मीर के अन्तिम हल" को भारतीय युद्धबन्दियों से नत्थी करने की वर्तमान स्थिति के बजाय 'जंग के क्षेत्र' से और युद्धबन्दियों को युद्धबन्दियों से नत्थी करना ज्यादा बेहतर रहता। यहां फर्क यह है कि पाकिस्तान तो कश्मीर के झगड़े को हमेशा के लिए बनाए रख सकता है जबकि हम युद्धबन्दियों को लम्बे समय तक नहीं रोक सकते।...."

इण्डियन एक्सप्रेस

दिल्ली ४ जुलाई,

"...'अब तक भारत और पाकिस्तान के बीच मधुर सम्बन्धों की जितनी शुरुआत हुई उन सबका अन्त उतना ही दुखद हुआ। इस बात को मद्देनजर रखें तो शिमला समझौते में बहुत अधिक आशाओं को पालना भारी असावधानी होगी।..."

पेट्रियट

दिल्ली ४ जुलाई,

"...'समझौते पर पहुंचना सरल बात है, विशेष रूप से श्री भुट्टो जैसे एक 'तुरत-फुरत' कूटनीतिज्ञ' के लिए जो अपने निर्णय को उतनी ही सरलता और उतनी ही बार बदल सकते हैं जितनी बार सरलता से वह अपने ढेरों सुन्दर सूट बदलते रहते हैं। समझौतों से बंधे रहना श्री भुट्टो के लिए बहुत कठिन है और इसे वे स्वयं जानते हैं। श्री भुट्टो अब भले ही यह कहें कि वे ताशकन्द समझौते से सहमत नहीं थे और वे वहां वाक आउट कर गए थे किन्तु उन्होंने ऐसा कुछ नहीं किया था। जब उनके राष्ट्रपति ने हस्ताक्षर किये थे तब वे वहां मौजूद थे और विदेश मंत्री पद भी उन्होंने तभी छोड़ा था जब उसकी कोई आवश्यकता नहीं रह गई थी।...जिस समय भारतीय नीति नायकों से आगे बढ़ने वाली शिमला वार्ता की उपलब्धियों का आकलन कर रहे हों, उस समय उन्हें श्री भुट्टो की रंग और इरादे बदलने की इस क्षमता को नजरन्दाज नहीं कर देना चाहिए--"

ट्रिब्यून

चण्डीगढ़ ४ जुलाई,

"...यदि ताशकन्द में भारत का प्रयास ऐसा समझौता प्राप्त करना था तो राष्ट्रसंघ चार्टर के उल्लेखों से बोझिल न हो तो उसमें वह तब भी विफल रहा था और इस बार भी रहा है। राष्ट्रपति अयूब खाँ ने १९६६ में दृढ़तापूर्वक कहा था कि "ताशकन्द समझौते की पहली धारा को युद्धवर्जन सन्धि कदापि नहीं माना जाना चाहिए क्योंकि उसमें तो मैंने राष्ट्रसंघ चार्टर के अन्तर्गत पाकिस्तान द्वारा स्वीकृत दायित्व को स्वीकार भर किया है।"

उन्होंने कहा था, "इस दायित्व का अर्थ है कि राष्ट्रों को तब तक बल प्रयोग का सहारा नहीं लेना चाहिए जब तक शान्तिपूर्ण मार्ग खुले हों।" शिमला समझौता भी केवल यही बात दोहरा रहा है कि दोनों देशों के सम्बन्ध राष्ट्रसंघ चार्टर के उद्देश्यों एवं सिद्धान्तों द्वारा अनुशासित रहेंगे। अतः यह कहा जा सकता है कि इस बार भी हम वह युद्ध-वर्जन सन्धि नहीं पा सके हैं, जिसकी हमने हमेशा कामना की और पाकिस्तान जिससे निरन्तर कतराता रहा है। किन्तु यदि पाकिस्तान ऐसी सन्धि की लाइनों पर भी हस्ताक्षर कर देता तो भी वह जब चाहता तब उसे फाड़कर रद्दी में फेंक देता। क्या चीन ने पंचशील सन्धि के बावजूद भारत पर आक्रमण नहीं किया था? युद्ध के समान शांति का भी जन्म पहले लोगों के दिमागों में होता है।..."

नवभारत टाईम्स

दिल्ली ४ जुलाई,

"फिर भुट्टो साहब ने सब विवादास्पद प्रश्नों को शान्तिपूर्ण एवं पारस्परिक ढंग से सुलझाने का तो वचन दे दिया है। इसी प्रकार शक्ति का प्रयोग न करने की बात भी कही गई है जो दूसरे शब्दों में अनाक्रमण सन्धि के बराबर है, किन्तु सवाल यह है कि क्या उसके पालन किए जाने के आसार हैं? ताशकंद घोषणा में भी ऐसी बातें कही गई थीं। किन्तु इतिहास साक्षी है कि वे अमल में नहीं आयीं। घोषणा और समझौते में अन्तर जरूर है। परन्तु तोड़ने वाले के लिए तब बराबर हैं। इस पर भुट्टो साहब के वक्तव्यों से साफ झलकता है कि वे भारत को आक्रामक मानते हैं और एक लम्बे अर्से तक अपनी सेना में कटौती के लिए तैयार नहीं हैं। इसी प्रकार उनका यह भी ख्याल है कि विश्व इतना छोटा हो गया है कि किसी समस्या को केवल पारस्परिक आधार पर हल नहीं किया जा सकता। इसका मतलब है कि किसी तीसरी शक्ति का प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष हस्तक्षेप हो सकता है। क्या यह ऐसी सूरत है जिसमें स्थायी शान्ति की आशा की जा सकती है? एक प्रश्न यह भी है कि जब स्थायी शान्ति के लिए 'संकुल समझौते' का निश्चय किया गया था तो संघर्ष की मूल जड़ कश्मीर के प्रश्न को अधर में ही क्यों लटका रहने दिया गया है?

सबसे अधिक चौंकाने की बात तो यह है कि कश्मीर क्षेत्र को छोड़कर अन्तर्राष्ट्रीय सीमा से फौजों की वापसी का निर्णय कर लिया गया है। संदेह

नहीं कि इससे पाकिस्तान में बड़ी राहत अनुभव की जाएगी, परन्तु क्या इससे कश्मीर प्रश्न के हल में भारत की स्थिति कमजोर नहीं पड़ जाएगी और क्या इससे रक्षामंत्री के उस वचन का भंग नहीं होता कि भारत अधिकृत क्षेत्रों से अपनी सेनाएं तब तक नहीं हटाएगा जब तक स्थायी शान्ति के लिए सुदृढ़ आधार तैयार नहीं हो जाता? यह साफ है कि कश्मीर प्रश्न के हल न होने से वह आधार तैयार नहीं हो सका है। ऐसी हालत में यह आपसी निश्चय हो खतरनाक सिद्ध हो सकता है..."

हिन्दुस्तान स्टैन्डर्ड

कलकत्ता ४ जुलाई,

"पाकिस्तान के लिए सबसे बड़ा सवाल कश्मीर का भविष्य है और जब तक यह गुत्थी सुलझती नहीं, श्री भुट्टो की अपनी स्थिति सुरक्षित नहीं है।...उनके (श्री भुट्टो के) पास तुरुप का पत्ता यह है कि शिमला समझौता दोनों पक्षों को सेनाओं को पीछे हटने का आदेश देता है। इससे पाकिस्तान को एक भी गोली चलाये बिना वह सब भूमि प्राप्त हो जाएगी जो उसने दिसम्बर युद्ध में गंवा दी थी, जबकि भारत के हितों में भूमि की दृष्टि से नगण्य लाभ आयेगा...।"

परिशिष्ट—१

शिमला-समझौता

मूल पाठ

प्रधानमन्त्री श्रीमती इन्दिरा गांधी और राष्ट्रपति जुल्फिकार अली भुट्टो ने जिस समझौते पर २ जुलाई को शिमला में हस्ताक्षर किए थे, उसका मूल पाठ इस प्रकार है:

(१) भारत और पाकिस्तान की सरकारें यह संकल्प करती हैं कि दोनों देश इस संघर्ष और टकराव को समाप्त करेंगे जिसने उनके सम्बन्धों को अब तक बिगाड़े रखा है। वे मैत्री और सद्भावनापूर्ण सम्बन्धों तथा उपमहाद्वीप में स्थायी शान्ति कायम करने के लिए काम करेंगे, जिससे आगे से दोनों देश अपने साधनों और शक्ति का उपयोग अपनी जनता के कल्याण के गुरुतर कार्य में कर सकेंगे।

इन उद्देश्यों की पूर्ति के लिए भारत और पाकिस्तान की सरकारें निम्न बातों पर सहमत हैं कि :—

(क) दोनों देश आपसी सम्बन्धों में संयुक्त राष्ट्र घोषणा-पत्र के सिद्धान्तों और उद्देश्यों के अनुरूप कार्य करेंगे।

(ख) दोनों देश अपने मतभेदों को शान्तिपूर्ण उपायों तथा द्विपक्षीय बातचीत अथवा ऐसे किसी उपाय से हल करेंगे, जो दोनों देशों को मान्य हो। दोनों देशों के बीच किसी भी समस्या के अन्तिम समाधान होने तक कोई भी पक्ष एकतरफा तौर पर स्थिति में कोईपरिवर्तन नहीं करेगा और दोनों पक्ष ऐसी किसी कार्रवाई के संगठन, उसकी सहायता और प्रोत्साहन को रोकेंगे, जिससे शान्तिपूर्ण और सद्भावनापूर्ण सम्बन्धों को हानि पहुँचती हो।

(ग) दोनों देश समझौते, अच्छे पड़ोसीपन और स्थायी शान्ति के लिए वायदा करते हैं कि वे शान्तिपूर्ण सहअस्तित्व, एक-दूसरे की क्षेत्रीय अखंडता एवं प्रभुत्व सम्पन्नता तथा बराबरी तथा दोनों के लाभपर आन्तरिक मामलों में हस्तक्षेप न करने के उसूलों पर काम करेंगे।

(घ) दोनों देशों के सम्बन्धों में पिछले २५ वर्षों से बिगाड़ पैदा करने वाले संघर्ष के मूल विवादों और कारणों को शान्तिपूर्ण उपायों द्वारा सुलझाया जायगा।

(ङ) वे एक-दूसरे की राष्ट्रीय एकता, क्षेत्रीय अखंडता, राजनीतिक स्वतन्त्रता और समानता का सदैव सम्मान करेंगे।

(च) दोनों देश संयुक्त राष्ट्र घोषणा-पत्र के अनुरूप एक-दूसरे की क्षेत्रीय अखण्डता या राजनीतिक स्वतन्त्रता के विरुद्ध शक्ति का उपयोग नहीं करेंगे और न ही ऐसा करने की धमकी देंगे।

(२) दोनों सरकारें एक-दूसरे के खिलाफ शत्रुतापूर्ण प्रचार रोकने के लिए सभी सम्भव कदम उठायेंगी। वे ऐसी सूचना व प्रचार-प्रसार को प्रोत्साहन देंगी, जिनसे दोनों देशों के सम्बन्धों में वृद्धि हो।

(३) दोनों देशों के बीच शनैः-शनैः सम्बन्धों को कायम करने और उन्हें सामान्य बनाने के लिए इस पर सहमति हुई कि :

(क) संचार सम्बन्ध पुनः स्थापित करने के लिए कदम उठाए जायेंगे। संचार सम्बन्धों में डाक, तार, समुद्रीय एवं स्थलीय यातायात और विमान सेवाएं शामिल हैं। विभाग-सेवा में भारत पर से होकर उड़ानें भी सम्मिलित हैं।

(ख) एक-दूसरे देश के नागरिकों को यात्रा-सुविधाएं बढ़ाने के लिए उचित कदम उठाए जाएंगे।

(ग) आर्थिक तथा आपसी सहमति के क्षेत्रों में व्यापार और सहयोग यथा-सम्भव पुनः शुरू किया जाएगा।

(घ) विज्ञान और संस्कृति के क्षेत्र में आदान-प्रदान को प्रोत्साहन दिया जाएगा।

इस सम्बन्ध में आवश्यक विवरण तैयार करने के लिए दोनों देशों के प्रतिनिधिमण्डल समय-समय पर मिलते रहेंगे।

(४) स्थायी शान्ति की स्थापना की प्रक्रिया शुरू करने के लिए दोनों सरकारें इस पर सहमत हैं कि :—

(क) भारतीय और पाकिस्तानी सेनाएं अन्तर्राष्ट्रीय सीमा के अपनी-अपनी ओर हटा ली जाएंगी।

(ब) दोनों देश जम्मू-कश्मीर में १७ दिसम्बर १९७१ को हुए युद्ध-विराम के फलस्वरूप कायम हुई नियन्त्रण रेखा का किसी भी पक्ष द्वारा स्वीकृत स्थिति को प्रभावित किए बिना सम्मान करेंगे। कोई भी पक्ष इस सम्बन्ध में आपसी मतभेद या कानूनी परिभाषा को लेकर एकतरफा तौर पर स्थिति में परिवर्तन नहीं करेगा। दोनों पक्ष वायदा करते हैं कि शक्ति का प्रयोग करके रेखा का उल्लंघन नहीं करेंगे।

(स) सेनाओं की वापसी इस समझौते के लागू होने पर शुरू हो जाएगी और उसके १० दिन बाद यह काम पूरा हो जाएगा।

(५) इस समझौते की दोनों देशों की अपनी-अपनी सांविधानिक प्रक्रियाओं के अनुरूप पुष्टि होनी आवश्यक है। इन पुष्टि-पत्रों का आदान-प्रदान की तिथि से ही समझौता लागू होगा।

(६) दोनों सरकारें इस पर सहमत हैं कि उनके प्रधान भविष्य में दोनों की सुविधा के अनुरूप किसी समय मिलेंगे। इस बीच सम्बन्धों के सामान्यीकरण की प्रक्रिया और प्रशस्त तय करने के लिए दोनों पक्षों के प्रतिनिधियों की बैठक होंगी। ये प्रतिनिधि युद्ध में बन्दी बनाए गए सैनिकों और नागरिकों की वापसी, जम्मू-कश्मीर विवाद के अंतिम निपटारे और राजनयिक सम्बन्ध पुनः कायम करने के प्रश्नों पर विचार करेंगे।

परिशिष्ट २

शिमला समझौता रद्द करो

जनसंघ कार्यसमिति का प्रस्ताव

प्रधानमंत्री ने शिमला में जिस तरह से देश को नीचा दिखाया है उससे भारतीय जनसंघ की कार्यसमिति को धक्का लगा है। इसकी निकृष्टतम आशंकाएं सही निकली हैं। ताशकन्द का इतिहास बदतर रूप में दोहराया गया है। जवानों के खून से युद्ध क्षेत्र में जो कुछ जीता गया उसका सौदा बातों टेबुल पर एक कागज के टुकड़े के बदले में कर लिया गया। दीर्घकाल पूर्व निर्णीत कश्मीर विलय के मामले पर नई अनिश्चितताएं पैदा कर दी गईं एवं पाकिस्तान को एक पक्ष मान लिया गया। कश्मीर के दो पंचमांश भाग पर से पाकिस्तान के गैर कानूनी कब्जे को हटाना, शस्त्रों की सीमाबन्दी, पाकिस्तान से एक हजार करोड़ रुपये से अधिक के दीर्घकालीन बकाये की वसूली, जिसमें संयुक्त भारत के सार्वजनिक ऋण में पाकिस्तान का भी हिस्सा शामिल है, १९६५ में जब्त भारतीय सम्पत्ति, अतिरिक्त निष्क्रान्त सम्पत्ति का मुआवजा तथा भारत में गत वर्ष अकेले गए शरणार्थियों पर किया गया व्यय ऐसे मामले हैं जो श्रीमती गांधी द्वारा उठाए तक नहीं गए। यह एक खुला एवं स्पष्ट विश्वासघात है।

भुट्टो शिमले में तीन उद्देश्यों को लेकर आये थे :

(१) खोई हुई भूमि की पुनर्प्राप्ति।

(२) युद्धबन्दियों की वापसी, और

(३) कश्मीर के मामले को फिर से खोलना।

उन्होंने प्रथम और तृतीय को प्राप्त कर लिया तथा दूसरे के लिए रास्ता बना लिया। पाकिस्तान द्वारा बंगला देश को मान्यता प्रदान करते ही युद्धबंदियों को रिहा करना पड़ेगा। प्रधानमंत्री स्थायी शान्ति के लिए एक-मुश्त समझौते के वायदे के साथ शिखर के लिए गई थीं। वे दोनों मुद्दों पर हार गईं और शब्दों के अम्बार लाने के लिए एक स्वर्ण अवसर खो दिया। एक विजेता देश को उसकी प्रधानमंत्री द्वारा इस प्रकार के अपमान का घूंट

पीने के लिए विवश किया जाना, यह विश्व इतिहास का शायद प्रथम उदाहरण है।

ज्योंही समझौते पर हस्ताक्षर हुए आकाशवाणी, टेलीविजन तथा देश के कुछ समाचार पत्रों ने इस ऐतिहासिक समझौते की प्रशंसा के तराने छेड़ दिए। स्थायी शांति, अच्छे पड़ोसी के सम्बन्ध तथा सहअस्तित्व की उद्देश्यपूर्ण प्रशंसाओं को काफी बढ़ा-चढ़ा कर पेश किया गया। इसे एक गारंटी माना गया कि पाकिस्तान द्वारा शक्ति का प्रयोग अब छोड़ दिया जायगा।

कोई भी इस ओर ध्यान देता हुआ नहीं दिखाई दिया कि चीन ने पाकिस्तान के शस्त्रास्त्रों की पूर्ति फुर्ती के साथ कर दी है तथा उसे दो अतिरिक्त डिवीजन खड़ा करने के लिए सक्षम किया है। यह भी भुला दिया गया कि पाकिस्तान ने सुरक्षा बजट में ४०६ करोड़ रुपए की व्यवस्था की है जो कि किसी भी समय से अधिक है। यह विस्मृत कर दिया गया कि भुट्टो ने शिमला आने से पूर्व शस्त्रास्त्रों की भीख मांगने, उधार लेने अथवा खरीद करने हेतु बड़ी जल्दबाजी में एक दर्जन मुस्लिम देशों की यात्रा की थी। उन्होंने पराजय का बदला लेने के लिए पाकिस्तानी सेना को "एशिया की सर्वश्रेष्ठ सेना" बनाने की प्रतिज्ञा ली है। वे "स्थायी संधि" पर हस्ताक्षर करने के लिए तैयार नहीं, उसका चाहे जो भी महत्व हो। इस तथ्य की ओर दुर्लक्ष्य किया गया कि शिमला समझौते की कुछ धाराएं ताशकन्द घोषणा की क्षीण प्रतिध्वनि मात्र हैं। फिर भी भुट्टो ने ताशकन्द की भर्त्सना की थी, इस प्रश्न पर वे अयूब सरकार से निकल गए थे और उन्होंने भारत के विरुद्ध एक हजार वर्ष तक युद्ध करने का प्रण किया था। कल के खलनायक को रातोंरात शान्ति का राजकुमार बनाकर हमारे सामने प्रस्तुत किया गया।

संधि को एक शानदार उपलब्धि का रंग दिया जा रहा है क्योंकि दोनों देशों ने अपने विवादों को शान्ति से द्विपक्षीय वार्तालाप द्वारा सुलझाने की प्रतिज्ञा ली है। कार्यसमिति देखती है कि दिसम्बर १९४८ के "इंटर डोमिनियन एग्रीमेंट" (जबकि पाकिस्तानी लुटेरे कश्मीर में भारतीय भूमि को रौंद रहे थे) से लेकर बाद में नेहरू-लियाकत समझौते तथा १९६५ की ताशकन्द घोषणा तक—जिनमें से एक-एक का पाकिस्तान ने उल्लंघन करके ही पालन किया—

प्रत्येक में अच्छे इरा.. की अभिव्यक्ति की गई है। द्विपक्षीय धारा के (जिसमें आपसी सहमति से विदेशी हस्तक्षेप का रास्ता खोल कर रखा गया है) अभी से विभिन्न अर्थ किए जाने लगे हैं। प्रधानमंत्री कश्मीर प्रश्न को संयुक्त राष्ट्र से बाहर रखने के लिए पाकिस्तान को बाध्य मानती हैं जबकि भुट्टो का कहना है कि इस प्रश्न को फिर से वहां उठाने से उन्हें कोई नहीं रोकता।

कार्यसमिति विश्वास करती है कि शिमला समझौते पर हस्ताक्षर करके श्रीमती गांधी ने देश की भारी सुसेवा की है। स्पष्ट है कि उन्होंने बड़ी शक्तियों के दबाव के आगे घुटने टेक दिए। पाकिस्तान के प्रति अमरीकी "लुकाव" तो सर्वविदित ही है, रूस भी पाकिस्तान में खोई हुई सद्भावना की कुछ पुनर्प्राप्ति के लिए उत्सुक है। श्री पर की मास्को के लिए दौड़, राष्ट्रपति पोदगोर्नी का योजनापूर्वक कलकत्ता रुकना एवं श्री स्वर्णसिंह से बातचीत तथा इसी के बाद पाक विदेश सचिव अजीज अहमद को मास्को की पुनर्आश्वस्ति ये सब रूस द्वारा भारत को "उदारता" बरतने की "सलाह" के स्पष्ट संकेत हैं। शिमला में वार्तालाप के पूर्ण गतिरोध की ओर बढ़ने के सभी चिन्ह थे। ऐन समय पर सभी बातें एकाएक जादुई ढंग से दूर हो गईं, यह इस बात को प्रकट करता है कि इसके पीछे और भी कुछ है जो दिखाई नहीं देता। समझौता सम्पन्न कराने में सहायता के लिए श्री भुट्टो द्वारा रूस व अमरीका को अविलम्ब एवं हार्दिक धन्यवाद केवल कूटनीतिक शिष्टाचार मात्र नहीं है।

पत्रकार सम्मेलन में प्रधानमंत्री के उत्तर श्री भुट्टो के इस दावे को पुष्ट करते हैं कि वे कश्मीर विवाद को पुनः खोलने में सफल रहे हैं। श्रीमती गांधी ने युद्ध विराम रेखा के आधार पर समझौते पर विचार करने की अपनी इच्छा भी प्रकट की है। राष्ट्र यह जानने का अधिकारी है कि जम्मू-कश्मीर के उन भाग को, जो कानूनी एवं संवैधानिक रूप से हमारा है, वे किस अधिकार से आक्रमणकारी को भेंट देने के लिए तैयार हो गई हैं।

पाकिस्तान राष्ट्रीय असेम्बली में राष्ट्रपति श्री भुट्टो के भाषण ने उन सभी को झकझोर दिया है, जो कांगी-कम्युनिस्ट-लीग प्रचार तंत्रों द्वारा देश में खड़े किए जा रहे आत्म-प्रवंचना के व्यामोह से असाध्य रूप में ग्रस्त नहीं हैं। श्री भुट्टो ने काश्मीरियों को "भारतीय जुए" से छुड़ाने के लिए "मुक्ति संग्राम" का आरंभ करने के लिए उकसा कर और उनके लिए "चाहे जो परिणाम हों" अपना "रक्त बहाने" का आश्वासन देकर शिमला समझौते को भंग कर दिया है।

अतः कार्यसमिति भारत के राष्ट्रपति से जोरदार आग्रह करती है कि वे समझौते की पुष्टि न करें। इस बारे में जनता की इच्छायें जानने के लिए जनमत-संग्रह करायें। कार्यसमिति भारतीय लोगों का भी आह्वान करती है कि सरकार के सामने असंदिग्ध रूप में स्पष्ट कर दें कि वे इस असम्मानजनक समझौते को अस्वीकार करते हैं।

१८ जुलाई को जनसंघ की भारतीय कार्य समिति द्वारा दिल्ली में पारित प्रस्ताव

परिशिष्ट—३

घोर विश्वासघात

३ जुलाई को जनसंघ अध्यक्ष की प्रथम प्रतिक्रिया

जनसंघ अध्यक्ष श्री अटल बिहारी वाजपेयी ने शिमला समझौते के सम्बन्ध में निम्नलिखित वक्तव्य दिया है :

भारतीय जनसंघ को भारत और पाकिस्तान के बीच शिमला समझौते से गहरा धक्का लगा है और उसकी दृष्टि में यह समझौता विश्वासघात से कम नहीं है।

इस समझौते का मुख्यतः दो कारणों से स्वागत किया जा रहा है।

प्रथम तो यह कहा जा रहा है कि इस घोषणा से विवादों को हल करने के लिए बल प्रयोग का परित्याग हो गया है। वस्तुतः यह सर्वथा निरर्थक है क्योंकि पाकिस्तान बल प्रयोग को छोड़ने की घोषणा इससे पहले भी अनेक बार कर चुका है। ताशकन्द समझौते में लगभग इन्हीं शब्दों में इस उद्देश्य की घोषणा की गयी थी किन्तु पाकिस्तान के कथन को उसकी इस करनी के प्रकाश में देखना होगा कि उसने इस वर्ष सैन्य-सज्जा के लिए अधिकतम धन सुरक्षित रखा है और वह अन्य देशों से शस्त्रास्त्र प्राप्त करने का बीतोड़ प्रयत्न कर रहा है।

दूसरा यह दावा किया जा रहा है कि शिमला समझौते के अन्तर्गत सभी विवाद द्विपक्षीय वार्ता द्वारा हल किए जाएंगे। लेकिन सचाई यह है कि शिमला समझौते में "अन्य शांतिपूर्ण उपायों" के नाम पर तीसरे पक्ष के हस्तक्षेप के लिए द्वार खोलकर रखे गए हैं।

शिमला समझौते में सेनाओं के अन्तर्राष्ट्रीय सीमा पर वापसी का अर्थ यह होगा कि जबकि भारत पाकिस्तान के ५००० वर्गमील से अधिक क्षेत्र को छोड़ देगा, पाकिस्तान काश्मीर में भारत की ३० हजार वर्गमील भूमि पर बलात् कब्जा जमाए रहेगा। यह हमारे जवानों के बलिदान पर पानी फेरने के समान होगा।

प्रधानमंत्री ने शिखर सम्मेलन के पूर्व राष्ट्र को यह भी वचन दिया था कि शिमला में भारत और पाकिस्तान के बीच 'टुकड़ों में हल' करने के बजाय सभी प्रश्नों का 'एक साथ समाधान' किया जायेगा। किंतु शिमला में 'कदम-ब-कदम समझौते' की प्रक्रिया को स्वीकार करके राष्ट्रपति भुट्टो ने प्रधानमंत्री मात खा गईं। फलतः काश्मीर से पाकिस्तान के आक्रमण की समाप्ति, युद्ध का हरजाना, विभाजन के ऋण की अदायगी, निष्क्रांत सम्पत्ति का निपटारा तथा बंगला देश के विस्थापितों पर हुए खर्चे की भरपाई के प्रश्न जिनका भारत के हितों के साथ सीधा सम्बन्ध है, पूरी तरह ताक पर रख दिए गए हैं। शिमला समझौते ने भारत की सैनिक विजय को सुदृढ़ करके स्थाई शांति कायम करने का आधार प्रस्तुत करने के बजाय, भारत को आत्मवंचना की उसी स्थिति में पुनः पटक दिया है जिसमें शांति, मित्रता तथा हस्तक्षेप के मंत्रोच्चार मात्र के अतिरिक्त और कुछ नहीं।

भारतीय जनसंघ का यह निश्चित मत है कि जवानों द्वारा लड़ाई के मैदान में प्राप्त विजय को शिमला में भारत सरकार ने वार्ता की टेबुल पर बैठकर गंवाना आरम्भ कर दिया है।

मुद्रक : नवचेतन प्रेस (प्रा०) लि० (औजिज आफ अर्जुन प्रेस),
नया बाजार, दिल्ली।

मूल्य ५० पैसे